अनुसन्धान प्रवाह Anusandhan Pravah
(An Open Access, Peer Reviewed, Multidiciplinary, Bilingual, E-Journal)
Vol.1, Issue 1, Year 2024, pp. 36-46
URL : https://journal.sskhannagirlsdc.ac.in/
सदनलाल सांवलदास खन्ना महिला महाविद्यालय
स्वर्ण जयन्ती वर्ष
2024-2025

बौद्ध धर्म में स्त्री-रत्न

डॉ सत्यप्रकाश
सहायक आचार्य
प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सारांश:

विश्व का इतिहास पुरुषों का इतिहास रहा हैं, क्योंकि इसे महिलाओं की कोई चर्चा किये बगैर लिखा गया था। समाज में महिलाओं की भूमिका काफी सीमित घिसी-पिटी व निम्न स्तर की रही है। मानव जाति की भाषा, संस्कृति व विचार-पद्धतियाँ पुरुषों की ही रचनाएँ हैं। इस प्रकार इस विश्व की रचना व प्रगति में महिलाओं को भागीदार मानने के बजाय पुरुषों ने उन्हें विचित्र व बाधक वस्तु के रुप में देखा हैं। वे अपने जीवन में कुछ ज्यादा पा भी नहीं सकती थी क्योंकि उनकी पहुचँ नगण्य वस्तुओं तक ही सीमित थी। उनके जीवन की धारा जन्म से मृत्यु तक, पिता, भाईयों, पति व अतंतः पुत्र के अधीन रही है। मै अपने शोध-पत्र के माध्यम से ''बौद्ध धर्म में स्त्री-रत्न'' के विषय पर ही केन्द्रित किया हैं।

Article Publication:

Published online on: 30/12/2024

Corresponding Author:
डॉ. सत्यप्रकाश
सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
Email: **sp.sanskrit@gmail.com**

©Sadanlal Sanwaldas Khanna Mahila Mahavidyalay

Scan For Paper

मुख्य शब्द :

संघ, गृहस्थ, उपासिका, भिक्षुणी, महाबोधि, महाप्रजापति गौतमी, कुमारदेवी, सुजाता, आम्रपाली, विशाखा, कात्यायनी, नन्दमाता, महादेवी, संघमित्रा.

परिचय

बौद्ध कला की भांति, बौद्धकालीन समाज में नारी की स्थिति पर भी कई ग्रन्थों का लेखन हुआ है लेकिन इस अध्ययन का आधार पुरातात्त्विक स्रोतों के अभाव में प्रायः अधूरा रह गया हैं। बुद्ध नारी को संघ में सम्मिलित किये जाने के आनंद के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देने के दृष्टांत के आधार पर एक ऐसी अवधारणा को स्वीकार करने पर बल दिया जाने लगा कि बौद्ध धर्म नारी को सम्मान-जनक रुप से ग्रहण करने के स्थान पर हीन दशा को प्रशस्त करता था, जबकि वास्तव में स्थिति इसके नितांत विपरीत है। जातकों, अभिलेखों और मूर्तियों के गहन अध्ययन से ऐसी किसी भी धारण पर विश्वास करने के पुष्ट आधार उपलब्ध नहीं होते वरन इन सभी स्रोतों के अध्ययन के उपरांन्त नारी की जो छवि हमारे सामने निखर कर आती है वह उसके द्वारा सामाजिक-आर्थिक परिप्रेक्ष्य में निभाई जा रही महत्वपूर्ण भूमिका के निस्पादन के परिकलपना को प्रगाढ़ एवं प्रशस्त करती हैं। गौतम बुद्ध और उन्हीं की तरह विचार रखने वाले आनंद जैसे उनके शिष्यों का महिलाओं के प्रति बड़ा ही सकारात्मक व क्रातिकारी रुख था। बुद्ध ने पुरुषों व महिलाओं दोनों के समान हित के लिए अपने संघ के दरवाजे खोले। यह एक ऐसा रुख था, जो उस समय के लिए एक असाधारण बात थी, और जिसे बुद्ध के आलोचकों ने एक उग्र व खतरनाक कदम माना। बुद्ध और आनंद द्वारा ऐसे रुख को अपनाया जाना परंम्परागत लिंगीय विकृति से परे सद्गुण व आध्यात्मिक संभावना को पहचानने की ओर से किये गये प्रयासों को प्रतिविंबित करता हैं। बड़ी संख्या में महिलाओं ने इस अवसर का लाभ उठाया। बुद्ध ने नारी को ज्ञानी, मातृत्त्वशील, सृजनात्मक, भद्र व सहिष्णु के रुप में स्वीकार किया। बुद्ध कि शिष्याओं में कई ऐसी महिलाएँ थी जो मानसिक एवं दैहिक दुखों जो मानवीय अस्तित्व के यर्थाथ से पुर्ण मुक्त होकर अर्हत् बनी(सराओ, 2004: 89-90)। बौद्ध धर्म में महिलाएँ दो भागों में विभक्त थी, एक तो वे जो गृहस्थ रहते हुए बौद्ध धर्म के गृहस्थ शीलों का पालन करती थी, उन्हें उपासिका कहते थे, और दूसरी वे भिक्षुणी होती थी जो प्रवज्या ग्रहण कर सन्यासनियों की भाँति रहते सद्धर्म के कठोर नियमों का पालन करती थी। पूर्व में मात्र उपासिका ही रह सकती थी। लेकिन भारतीय धर्म के इतिहास में यह प्रथम अवसर था, जब पुरुष की भाँति महिलाओं ने भी संघ में प्रवेश किया। उन्होंने गृहणी जीवन की श्रृंखला को तोड़कर प्रव्रज्जित जीवन के उन्मुक्त सुख की अनुभूति का अवसर प्राप्त किया(अहिरवार, ,2015: 222)। प्रमुख उपासिका हैं। जैसे- महाप्रजापति गौतमी, महाउपासिका कुमारदेवी, सुजाता, आम्रपाली,

गोपाला माता देवी, राजकुमारी विशाखा, कात्यायनी, भद्रा कात्यायनी, नन्दमाता, महादेवी, संघमित्रा, राजकुमारी रुद्रधरभट्टारिका, राजकुमारी चन्द्रलेखा आदि है।

महाप्रजापति गौतमी

महिला समाज को भिक्षु-धर्म में दीक्षित करने के पक्ष में नहीं थे। विनयपिटक में इस बात का उल्लेख है कि महात्मा बुद्ध महिलाओं के प्रव्रज्या ग्रहण करने के विरुद्ध थे, और कपिलवस्तु में अपनी विमाता महाप्रजापति गौतमी के भिक्षुणी बनने के अनुरोध को ठुकरा दिया था, इसके बाद वे वैशाली लौट गये। किन्तु तत्पश्चात् गौतमी बहुत-सी शाक्य महिलाओं के साथ अपने बाल मुड़वाकर, काषाय वस्त्र पहनकर बुद्ध के महावन विहार में पहुचीं। वैशाली तक पैदल आते-आते उनके पैर सूज गये थे, गात्र धलि-धूसरित हो गये थे और नेत्र अश्रुपूरित थे। उनकी ये दशा देखकर आनन्द करूणार्द्र हो गये और उन्होंने बुद्ध से महिला-प्रवज्या की प्रार्थना की और यह तर्क दिया कि स्त्रियाँ भी अध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के योग्य हैं। बुद्ध उनके अनुरोध को स्वीकार तो अवश्य किया, किन्तु उन्होंनें इसके साथ आठ प्रकार की शर्ते भी लगा दी। जो इस प्रकार हैं- (1) भिक्षुणियाँ श्रमणों का आदर करेंगी। (2) अभिक्षु-कुल में भिक्षुणियों का वर्षावास नहीं होगा। (3) प्रत्येक पखवारे भिक्षुणियाँ भिक्षुसंघ से उपोसथ (पृच्छ और अवपादोपसंक्रमण) प्राप्त करेगीं। (4) वर्षावास के अनन्तर भिक्षुणियों को दोनों संघों दृष्ट, श्रुत और परिशंकित तीनो स्थानों से प्रवारण करनी पड़ेगी। (5) भिक्षुणियाँ दोनों संघों में पक्षमानता करेगी। (6) दो वर्ष के अर्न्तगत छह धर्मो में शिक्षित होकर भिक्षुणी को दोनों संघों में उपसम्पदा की प्रार्थना करनी पड़ेगी। (7) भिक्षुणी को आक्रोश-परिभाषण नहीं करना होगा। (8) भिक्षुओं के सम्बन्ध में कुछ कहने का मार्ग भिक्षुणियों के लिए निरूद्ध होगा (मिश्र, 2002: 821)। इन शर्तो के साथ भिक्षुणी-संघ को अनुमति देते हुए बुद्ध ने कहा कि ‘‘यदि स्त्रियाँ इस धर्म-विनय में प्रवज्या न पाती तो यह सहस्त्र वर्ष तक ठहरता, स्त्री-प्रव्रज्या के कारण सद्धर्म केवल पाँच सौ वर्ष ठहरेगा। स्त्रियों के लिए प्रज्ञप्त शिक्षापद (जो कि पाचित्तिय संख्या 63 से 68 तक हैं) हिंसा, चोरी, अब्रह्मचर्य, मृषावाद, मद्यपान, और विकाल-भोजन का वर्जन करते हैं। उसके लिए उपदिष्ट प्रातिमोक्ष में अनियत-काण्ड नहीं हैं(पाण्डेय, 2010: 120)।

महाप्रजापति गौतमी

कुमारदेवी

प्राचीन भारतीय इतिहास मेंकन्नौज का अन्तिम राजवंश गहड़वाल था। इस वंश के शासक ही नहीं, रानियाँ और महारानियाँ भी बौद्ध धर्म की उपासिकायें थी। इसकी राजधानी वाराणसी थी। इसी वंश के प्रसिद्ध शासक गोविन्द चन्द्र की रानी कुमारदेवी ने सारनाथ में एक विशाल बौद्ध विहार का निर्माण करवाया था, जिसके ध्वंसावशेष पुरातत्त्व के उत्खन्न में प्राप्त हुए।इसका नाम ‘‘धर्मचक्र जिन विहार‘‘ था, जो नौ खण्डों में विभक्त था। पूर्व से पश्चिम में इसकी लम्बाई 760 फीट थी। गर्मी के लिए एक सुरंग (ध्यान भावना के लिए) बनाई गयी थी, जिसके अन्तिम छोर पर भगवान् बुद्ध की एक भब्य मूर्ति स्थापित कि गयी थी। पठन-पाठन के लिए विहार के प्रांगण में ‘‘परिवेण‘‘ बना हुआ था। विहार में एक मंदिर था, जिसमें भगवान बुद्ध की मूर्ति स्थापित की गयी थी। यह मंदिर सारनाथ के सभी मंदिरों में सबसे विशाल था। कुमारदेवी ने इसके खर्च के लिए वाराणसी की सबसे बड़ी तहसील जम्बुकी दान दी थी। उपासिका कुमारदेवी ने सारनाथ में अशोक निर्मित गन्धकुटी में तथागत की मूर्ति पुनः पतिस्थापना की। ‘‘उसने नालन्दा और बोधगया के महाबोधि विहार के लिए पर्याप्त दान दिया था। सहस्त्रों भिक्षुओं को आश्रम दिया और अनेक विहारों का दायकत्त्व भार संभाला‘‘(धर्मरक्षित,1981: 88-89)। महाउपासिका कुमारदेवी के जीवन वृत्त के विषय में पता चलता है कि गया जिले के पीठी प्रदेश के समान्त देवरक्षित की पुत्री थी। उनकी माता का नाम शंकरदेवी था। शंकरदेवी के पिता का नाम महनदेव था, जो अंग जनपद के अधिपति थे।

सुजाता

स्तूप (बोधगया)

सुजाता बुद्ध को खीर अर्पण करती हुईसुजाता

वट वृक्ष यानी बरगद के वृक्ष के नीचे भगवान बुद्ध जब तपस्या कर रहे थे। उसी समय सुजाता कन्या किया गया था(बौद्ध,2020: 14)। क्योंकि सुजाता ने मन्नत माँगी थी, कि अगर उसको पुत्ररत्न की प्राप्ति होती है तो वह वट वृक्ष के नीचे खीर चढ़ायेगी। सुजाता की मनोकामना पूर्ण हो गयी और ज्येष्ठ माह की अमावस्या के दिन कठोर तपस्या के दौरन निरंजना नदी के बाँयें तट पर अवस्थित बरगद की शीतल छाँव में ग्वालन सुजाता ने सिद्धार्थ को खीर दान किया था। बुद्ध ने खीर खाकर कटोरे को नदी में फेक दिया। उसी रात भगवान बुद्ध को ज्ञान की प्राप्ति हुई।

गोपाल माता देवी

उज्जयिनी के समीप ही 'तेलप्पणालि' (तेल-एनालि अर्थात् तेलियों पाणियों का गाँव, वर्तमान तराना) नामक गाँव में एक शूद्रवर्ण परिवार की कन्या (ई0 पूर्व छठीं शताब्दी) रहती थी(उपाध्याय,1991: 232)। कन्या का परिवार आर्थिक दृष्टि से बहुत विपन्न था, कन्या के सौन्दर्य रूप और लम्बे केशों की नगर में बड़ी ख्याति थी। इस नगर में एक धनिक कन्या ''अल्पकेशा'' थी। वह शूद्र वर्ग की कन्या के केशों को एक हजार कार्षापण में खरीदना चाहती थी, परन्तु स्वभाविक और सौन्दर्य वस्तु होने के कारण उसने केश नहीं बेचें। एक समय बुद्ध के शिष्य स्थविर महाकात्यायन श्रावस्ती में भगवान बुद्ध से मिलकर, अवन्ति लौटकर आ रहे थे, तो वे इसी गाँव में ठहरे। स्थविर अवन्ति नरेश चण्ड़प्रद्योत के राजपुरोहित थे। नगरवासियों ने बौद्ध धर्मग्रहण करने के कारण महाकात्यायन को सम्मान नहीं दिया। महाकात्यायन और उनकी शिष्य मण्डली को जब नगर में भिक्षा न मिलने की बात शूद्र कन्या ने सुनी तो उसने महाकात्यायन से अपने घर चलने एवं भोजन करने का अनुरोध किया, इस हेतु उसने अपने सुन्दर केशों को काटकर धनिक की कन्या को बेचें। लेकिन धनिक कन्या ने अवसर का लाभ उठाते हुए मात्र आठ कार्षापण ही दिए। इन आठ कार्षापणों से भोजन समाग्री खरीदकर स्थविर महाकात्यायन और उनके शिष्यों को भोजन कराया। इससे प्रसन्न होकर महाकात्यायन ने उत्तम मंगल का आशीर्वाद दिया और उज्जयिनी को चल पड़े। यह बात अवन्ति नरेश चण्ड़प्रद्योत ने सुनी तो वे शूद्र कन्या से इतने प्रभावित हुए की उन्होंनें उसे पटरानी ही बना लिया। इसी पटरानी से एक राजपुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। चूँकि पटरानी एक गोपाल नाम के होनहार पिता (कही नानी का नाम बतलाया गया हैं) की सन्तान थी। इस कारण पुत्र का नाम भी गोपाल रखा गया, और इसी रानी का नाम गोपाल माता देवी पड़ गया। समयानुसार रानी ने भी बौद्ध धर्म ग्रहण कर बुद्ध के प्रति समर्पित हो गयी।

आम्रपाली

एक बार भगवान बुद्ध वैशाली पधारे हुए थे। यह जानकर वैशाली की प्रसिद्ध नगरवधू आम्रपाली बुद्ध के समीप पहुँची और उनके कल्याणकारी उपदेशों को सुनकर उन्हें भिक्षु संघ के साथ अपने आवास पर भोजन के लिए निमन्त्रण दिया। भगवान बुद्ध ने मौन रहकर स्वीकार कर लिया। तथागत चीवर पहन, पात्र ले भिक्षु संघ के साथ आम्रपाली के निवास स्थान पर पधारे। आदर पूर्वक भोजन ग्रहण करवाने के पश्चात् आम्रपाली ने भगवान बुद्ध से निवेदन किया कि मैं अपना उद्यान भिक्षु संघ को अर्पित करना चाहती हूँ। तथागत ने मौन रहकर स्वीकार कर लिए तत्पश्चात आम्रपाली ने अपना आम्रवन, विहार बनवाकर कर भिक्षु को दान कर दी।

महात्मा बुद्ध का स्वागत करती हुई आम्रपाली

कात्यायनी

कात्यायनी (ई0पूर्व छठीं शताब्दी) भी उज्जयिनी (अवन्ति) प्रदेश की बौद्ध उपासिका थी। जिसके कार्यों से प्रसन्न होकर तथागत ने कहा(शोभा,1972: 60)। ‘‘एतदग्गं, भिक्खवे, मम विस्सासिकानं यदिदं कातियानी‘‘ अर्थात् भिक्खुओं सुनो मेरे रत्नत्रय (बुद्धम्, धम्मं, संघम्) के प्रति श्रद्धा रखने वाली मेरी सभी उपासिकाओं में कात्यायनी श्रेष्ठ हैं।

विशाखा

धम्मपद की अट्ठकथा के अनुसारविशाखा अपनी दासी सुप्रिया के साथ प्रवचन सुनने विहार जाया करती थी। विहार के द्वार पर ही वह अपने आभूषण को उतारकर दासी को दे दिया करती थी। क्योंकि वह तथागत के सामने आभूषण के साथ नहीं जाती। एक दिन दासी धर्मोपदेश सुनने में लीन हो गयी और आभूषण वापस लेना भूल गयी। विशाखा ने उसे वापस लाने के लिए कहा, यदि किसी भिक्षु

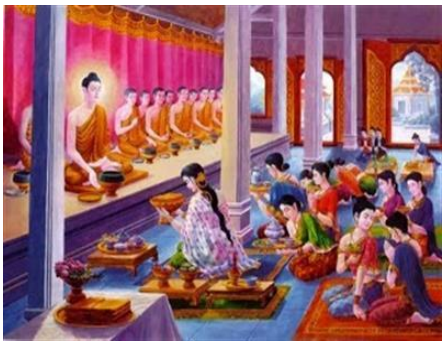

विशाखा अपनी दासियों के साथ प्रवचन सुनती हुई

ने रख लिया हो तो वापस मत लाना। विहार पहुँचने के पश्चात पता चला कि आनन्द ने उसे सुरक्षित अपने पास रखा है। विशाखा के आदेशानुसार दासी उसे अब लेने से मना कर दी। लेकिन आनन्द ने कहा- 'यह हमारे लिए भी वर्जित है।'तत्पश्चात् विशाखा ने उन आभूषणों को मँगा कर उसकी नीलामी करवा दी और उन मिले हुए नौ करोड़ कर्षापण एवं 10 करोड़ कर्षापण और लगाकर 'पूब्बाराम' नामक विहार का निर्माण करवाया(विनयपिटक,1879-83: 248)। इस विहार के निचले हिस्से में 500 और ऊपरी तल्ले में भी 500 कोठरियाँ थी। यह दो मंजिला विहार नौ मास में बनकर तैयार हुआ था।

नन्दमाता

नन्दमाता (ई0 पूर्व छठी शताब्दी) अवन्ति के वेलुकुण्ड नगर की निवासनी थी। स्थविर कुमापुत्र तथा सहायक कुमा इसी नगर के रहने वाले थे। एक बार धर्म सेनापति सारिपुत्र और महामोद्गल्यायन यहाँ आये थे, और नन्दमाता ने उनका स्वागत किया था। आचार्य घोष ने कहा हैं कि इस नगर की दीवारों के चारों ओर उसकी रक्षा के लिए घने बांसों के पेड़ लगाये गये थे, इस लिए इस नगर का नाम 'बेलकुण्ड' या वेणुकण्ट पड़ा, ने कहा था-''एतदग्गं, भिक्खवे मम झायीनं यदिनं नन्दा''। अर्थात् भिक्खुओं ! ध्यान भागवान में रत रहने वाली भिक्षुणियों में नन्दा भिक्षुणी श्रेष्ठ हैं। संभवतः यह नन्दमाता की पुत्री थी। महावंश भी नन्दमाता के सम्बंध में महत्त्वपूर्ण जानकारी देता हैं। इनका दक्षिणगिरि जनपद से सम्बंध रहा हैं। डॉ0 भरतसिंह उपाध्याय के अनुसार- पालि साहित्य में इसी नाम का प्रयोग दक्षिणापथ के एक जनपद के लिए भी किया गया हैं, जिसकी राजधानी उज्जयिनी बताई गई है। यहाँ अशोक उपराजा के रूप में शासन करता था। वेदिस नगर इसी में था, ई0 पूर्व द्वितीय लंकाधिपतिराज दुट्ठगामणि ने लंका के अनुराधपुर महास्तूप नामक विहार की आधार शिला रखने के लिए बौद्ध महोत्सव मनाया। उसमें उज्जयिनी के दक्षिणागिरि विहार से चालीस हजार बौद्ध भिक्षु भारत के विश्व प्रसिद्ध बौद्ध विहारों में उज्जयिनी का दक्षिणागिरि विहार भी एक प्रसिद्ध विहार था। यहाँ नन्दमाता का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा हैं। इस दक्षिणागिरि जनपद से भिन्न समझना चाहिए(सुत्तपिटक, 1954: 292)।

महादेवी

मौर्य सम्राट बिन्दुसार ने ई0 पूर्व तृतीय शताब्दी में राजकुमार अशोक को अवन्ति का राज्यपाल बनाकर भेजा तब रास्ते में वे विदिशा रूके और यहाँ एक श्रेष्ठी की सुन्दर पुत्री से विवाह किया, जिसका नाम देवी था। देवी से दो पुत्र उजेन, महेन्द्र तथा एक पुत्री संघमित्रा का जन्म हुआ। जिसने बौद्धधर्मों के प्रचार-प्रसार में अमूल्य योगदान दिया। उज्जयिनी में तथागत बुद्ध की ‘‘आसन्दी‘‘ तथा ‘‘आस्तरण‘‘ पर निर्मित भौतिक स्तूप हैं, जिसे महास्तूप कहा जाता हैं। बुद्धवंश में कहा गया है कि-‘निसीदनं अवन्तिपुरे रट्ठे अत्थरणं तदा‘ अर्थात्-अतएव भगवान बुद्ध के आसन और बिछौने पर स्तूप रचना ‘अवन्तिपुर राष्ट्र‘ में की गयी थी। अवन्तिपुरी राष्ट्र से तात्पर्य डॉ0 भरतसिंह उपाध्याय ने अवन्ति राष्ट्र की नगरी उज्जयिनी से ही किया हैं, जिसका जीर्णोद्वार देवी ने किया था। उसका बड़ा आकार तथा चतुर्दिक तोरणद्वारों का निर्माण कराया। वैश्यवर्ग की देवी द्वारा जीर्णोद्वार करने के कारण इस स्तूप का नाम वैश्य टेकरी ही पड़ गया। वर्तमान में स्तूप इसी नाम से जाना जाता हैं। डॉ0 वी0श्री0 वाकणकर के अनुसार देवी के प्रभाव में सम्राट् अशोक ने नगर के चारों ओर चतुर्दिक स्तूपों का निर्माण किया। यहाँ मौर्यों के पश्चात् गुप्तों तक बौद्ध मत का प्रभाव रहा। पुत्र उजेन के नाम पर अवन्ति का नाम उज्जयिनी हुआ, जो कालान्तर में कालगत हुआ। पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा को धम्म प्रचार हेतु श्रीलंका ससम्मान भेजा।

आचार्या संघमित्रा

सम्राट अशोक की पत्नी देवी से उत्पन्न संघमित्रा का जन्म (ई0पू0 282) उज्जयिनी में हुआ था, जिसका बौद्ध धर्म में महत्त्वपूर्ण योगदान हैं। महावंश के अनुसार श्रीलंका के राजा ने महाबोधि और संघमित्रा थेरी को लाने के लिए अपने भानजे अरिष्ट आमात्य को सम्राट अशोक के पास भेजा। जाने के पूर्व अरिष्ट ने बौद्ध धम्म की प्रव्रज्या ग्रहण की। ऐसा ही होवें कहकर राजा ने विदा किया। स्थविर ने राजा की वन्दना कर अश्विन मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया को जम्बुकोल बन्दरगाह से नाव पर चढ़, स्थविर के संकल्प की प्रेरणा से महासमुद्र को पारकर के विदा होने के दि नही रमणीय पटना नगर पुष्पपुर पहुँच गया। यहाँ श्रीलंका में 500 कन्याओं और अन्तःपुर की 500 स्त्रियों सहित शुद्ध ब्रती अनुलादेवी दस शील (पाँच शील) और पवित्र कषाय वस्त्र को धारण करके, प्रव्रज्या प्राप्ति की इच्छा से थेरी के आगमन की प्रतीक्षा करती हुई नगर के एक भाग में राजा द्वारा बनवाये गये भिक्षुणियों के निवास स्थान में रहने लगी। यह स्थान उपासिका विहार के नाम से प्रसिद्ध हुआ। महामहेन्द्र स्थविर और संघमित्रा भिक्षुणी अपने अनुयायियों के सहित उत्सव में भाग लेकर उपदेश दिए। लम्बा रास्ता होने के वजह से महाबोधि में छोटे-छोटे अंकुर (पाद पौधे)

निकल आये थे। इसे देखकर राजा अतिप्रसन्न हुआ। श्वेत छत्र से उनकी पूजाकर राज्याभिषेक भी किया। फिर एक-एक बोधि को आठ स्थानों पर स्थापित किया गया। शेष पाद-पौधों को बत्तीस स्थानों में स्थापित कर पूर्व श्रीलंका को गुंजायमान बना दिया। महाबोधि के स्थापना होने पर अपनी मण्डली के सहित अनुलादेवी ने संघमित्रा थेरी के पास प्रव्रज्या ग्रहण करके, अर्हत पद प्राप्त किया। संघमित्रा के साथ आठ सेठकुल महाबोधि को जम्बुद्वीप से यहाँ श्रीलंका आये थे। वह ''बोधाहारकुल'' नाम से प्रसिद्ध हुए। संघसहित संघमित्रा महाथेरी उपासिका विहार नाम से विख्यात आश्रम में रहने लगी। अपने विहार में रहते हुए संघमित्रा ने धम्म का प्रचार-प्रसार किया। राजा ने थेरी के अनुकूल स्तूप के चारों ओर भिक्षुणी आश्रम बनवा दिए।

आचार्या संघमित्रा

सम्राट अशोक की पत्नी देवी से उत्पन्न संघमित्रा का जन्म (ई0पू0 282) उज्जयिनी में हुआ था, जिसका बौद्ध धर्म में महत्त्वपूर्ण योगदान हैं। महावंश के अनुसार श्रीलंका के राजा ने महाबोधि और संघमित्रा थेरी को लाने के लिए अपने भानजे अरिष्ट आमात्य को सम्राट अशोक के पास भेजा। जाने के पूर्व अरिष्ट ने बौद्ध धम्म की प्रव्रज्या ग्रहण की। ऐसा ही होवें कहकर राजा ने विदा किया। स्थविर ने राजा की वन्दना कर अश्विन मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया को जम्बुकोल बन्दरगाह से नाव पर चढ़, स्थविर के संकल्प की प्रेरणा से महासमुद्र को पारकर के विदा होने के दि नही रमणीय पटना नगर पुष्पपुर पहुँच गया। यहाँ श्रीलंका में 500 कन्याओं और अन्तःपुर की 500 स्त्रियों सहित शुद्ध ब्रती अनुलादेवी दस शील (पाँच शील) और पवित्र कषाय वस्त्र को धारण करके, प्रव्रज्या प्राप्ति की इच्छा से थेरी के आगमन की प्रतीक्षा करती हुई नगर के एक भाग में राजा द्वारा बनवाये गये भिक्षुणियों के निवास स्थान में रहने लगी। यह स्थान उपासिका विहार के नाम से प्रसिद्ध हुआ। महामहेन्द्र स्थविर और संघमित्रा भिक्षुणी अपने अनुयायियों के सहित उत्सव में भाग लेकर उपदेश दिए। लम्बा रास्ता होने के वजह से महाबोधि में छोटे-छोटे अंकुर (पाद पौधे) निकल आये थे। इसे देखकर राजा अतिप्रसन्न हुआ। श्वेत छत्र से उनकी पूजाकर राज्याभिषेक भी किया। फिर एक-एक बोधि को आठ स्थानों पर स्थापित किया गया। शेष पाद-पौधों को बत्तीस स्थानों में स्थापित कर पूर्व श्रीलंका को गुंजायमान बना दिया। महाबोधि के स्थापना होने पर अपनी मण्डली के सहित अनुलादेवी ने संघमित्रा थेरी के पास प्रव्रज्या ग्रहण करके, अर्हत पद प्राप्त किया। संघमित्रा के साथ आठ सेठकुल महाबोधि को जम्बुद्वीप से यहाँ श्रीलंका आये थे। वह ''बोधाहारकुल'' नाम से प्रसिद्ध हुए। संघसहित संघमित्रा महाथेरी उपासिका विहार नाम से

विख्यात आश्रम में रहने लगी। अपने विहार में रहते हुए संघमित्रा ने धम्म का प्रचार-प्रसार किया। राजा ने थेरी के अनुकूल स्तूप के चारों ओर भिक्षुणी आश्रम बनवा दिए।

राजकुमारी रूद्रधरभट्टारिका

उज्जयिनी की शक-क्षत्रप राजकुमारी रूद्रधरभट्टारिका का विवेच्य क्षेत्र के बौद्ध धर्म के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा हैं। शक शासक रूद्रसेन प्रथम (199-200 ई0) व रूद्रसेन द्वितीय (254-74 ई0) का राज्य उज्जैन में था। इसकी पुत्री राजकुमारी रूद्रधरभट्टारिका थी, जो बौद्ध धर्म को मानने वाली थी। इसका विवाह इक्ष्वाकु वंशी वीरपुरूष (तीसरी शताब्दी का तृतीय चरण) से हुआ था। रानी ने अमरावती जग्गयपेट और नागार्जुनकोण्डा के बौद्ध स्तूप एवं महाविहार के निर्वाण में दान दिया था। स्वयं राजा वीर पुरूषदत्त और उसका पुत्र वाशिष्टीपुत्र एहुबुल शान्तमूल द्वितीय बौद्ध धर्म को मानने वाले थे। इस प्रकार उज्जयिनी की शक राजकुमारी ने बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

राजकुमारी चन्द्रलेखा

वाकाटक राजवंशी राजकुमारी चन्द्रलेखा भी उज्जयिनी परिक्षेत्र में बौद्ध धर्म से प्रभावित हुए नहीं रह सकी। भले ही उनके पूर्वज ब्राह्मण धर्म को मानने वाले रहे हों, लेकिन चन्द्रलेखा बौद्ध धर्म के नियमों का पालन बड़े ही सम्मानपूर्वक करती थी जिसका प्रभाव उज्जयिनी परिक्षेत्र पर पड़ा। वत्सगुल्य शाखा (विदर्भ के आस-पास) के सम्राट् देवसेना का पुत्र हरिषेण (475 से 510 ई0) एक बौद्ध राजा था। पाँचवी शती ई0 के अंतिम समय में मालवा की राजनीति में मूलभूत परिवर्तन हुए और दशपुर के औलिकरों का उदय हुआ। इस उथल-पुथल के समय हरिषेण ने कुछ समय के लिए अवन्ति नरेश को अपने प्रभावान्तर्गत कर लिया हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। यहाँ उज्जयिनी में उसकी पुत्री राजकुमारी चन्द्रलेखा थी, जिसका विवाह वलभीपुर के राजकुमार ध्रुवसेन से हुआ था। यह संबंध हूण आक्रमण को ध्यान में रखते हुए किया था। राजा हरिषेण बौद्ध धर्म का बहुत सम्मान करता था। उसका सचिव वराहदेव भी बौद्ध धर्म का अनुयायी था, और राजा तथा प्रजा दोनों का प्रिय था। कुछ विद्वानों ने हरिषेण को अवन्ति क्षेत्र का स्थानीय राजा माना हैं।

बौद्ध धर्म में स्त्रियों के योगदान को भूलाया नहीं जा सकता। क्योंकि इन स्त्रियों ने भिक्षुणी बनने से पहले कोई विष कन्या (वेश्या), राजमहिर्षि, राजकुमारी, धनिक व्यापारी की पुत्री इत्यादि थी, जिन्होंने भगवान बुद्ध के दिये हुए उपदेशों से प्रभावित हुई और इस धर्म को ग्रहण किया। इनमें से कुछ ने धन, आम के बगीचे, बॉस के बगीचे, विहार बनवाकर दान दिये। इस तरह से इस धर्ममें स्त्रियों के योगदानों के द्वारा प्रचार-प्रसार ही नहीं अपितु विकास भी हुआ। इस तरह से स्त्रियों ने अपना योगदान दिया, साथ ही उनका प्रचार-प्रसार भारत के साथ-साथ विदेशों में भी किया है। इनका योगदान बौद्ध धर्म के विकास में अविस्मरणीय रहा हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

- अहिरवार, राजकुमार (2015). *बौद्ध धर्म का इतिहास* प्रथम संस्करण, शिवालिक प्रकाशन,दिल्ली.
- उपाध्याय, भरतसिंह (1991). *बुद्धकालीन भारतीय भूगोल,* प्रथम संस्करण, हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग.
- सराओं, के0टी0एस0 (2004). *प्राचीन भारतीय बौद्ध धर्म: उद्भव, स्वरूप और पतन,* प्रथम संस्करण, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली.
- कानूनगों, शोभा. (1972). *उज्जयिनी का सांस्कृतिक इतिहास,* इन्दौर।
- धर्मरक्षित, भिक्षु (1981). *सारनाथ का इतिहास,* मोतीलाल वनारसीदास,वाराणसी।
- पाण्डेय, गोविन्दचन्द्र (2010), *बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास,* पंचम संस्करण, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान,लखनऊ.
- बौद्ध, साकेत वर्द्धन 2020. *मूलवंश कथा (परित्राण पाठ एवं संस्कार पद्धति*), तृतीय संस्करण, सम्यक् प्रकाशन,नई दिल्ली.
- मिश्र, जयशंकर (2002). *प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास,* नौवाँ संस्करण, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकाडमी, पटना.
- *विनय पिटक*: सम्पादक (सं0) एच0 ओल्डेनवर्ग, पी0टी0एस0 (1879-83). नालन्दा देवनागरी संस्करण, लन्दन.
- *सुत्तपिटक (*1954). सुत्तपिटक का संयुक्त निकाय, प्रथम भाग, सारनाथ (बनारस).